History of Museums
(with special reference to India)

संग्रहालय शब्द से हमारा जो आशय है तथा इसका प्रयोग आज हम जिस सन्दर्भ में वर्तमान परिप्रेक्ष में करते हैं उसके विकास की कहानी अत्यन्त अधुनातन है। पर दवानल की तरह इसका प्रसार होता जा रहा है। इसने अपनी ओर प्रत्येक व्यक्ति तथा समग्र समाज की भावनाओं को आज उन्मुख कर लिया है। इसकी उपयोगता खाली समय के उपयोग, दर्शनीय स्थल, पुरखों की कहानी का स्थान तथा आनन्द के माध्मम से शिक्षा प्रदान करने वाली संस्था के रूप में है। इसमें जनता को इतना प्रभावित किया है कि जन-जीवन में इसने अपना स्वैच्छिक तारतम्य बना लिया है। केवल धनी लोगों के सहयोग से आज संग्रहालयों की स्थापना नहीं होती वरन् सामान्य स्तर के लोगों की भी इसमें समान भागीदारी होती है। पाश्चात्य देशों यथा यूरोप, अमेरिका आदि में लोग इसके प्रति न केवल अत्यन्त इच्छुक रहते हैं अपितु उनके मन में स्थायित्व एवं विकास की बात बैठी हुई है। इसीलिए प्रायः अमेरिका में संग्रहालयों के पास यह लिखा रहता है *"This is your own museum. Enjoy it. It is for your enjoyment and for your benefit. If is flourishing under your fostering care. Become a member now if you are not already one and obtain your certificate"*. अर्थात् यह तुम्हारा अपना संग्रहालय है। इसका आनन्द लो। यह तुम्हारा आनन्द तुम्हारे लाभ का है। यह तुम्हारे गहन देखरेख में विकसित हो रहा है। यदि तुम इसके सदस्य नहीं हो तो हो जाओ और उसका प्रमाण प्राप्त कर लो।

[अ] पाश्चात्य विश्व में संग्रहालय का इतिहास

सिकन्दर जब एशिया का विजय करने चला था तो उसके साथ वैज्ञानिक भी थे। वे प्राकृतिक इतिहास की सामग्रियाँ एकत्रित करके उसके गुरु अरस्तू को अध्ययन एवं शोध के लिए भेजते थे। अरस्तू यद्यपि उन्हें बहुत दिनों तक संगृहीत न रख सका। फिर भी सिकन्दर की मृत्यु के बाद मिस्र में उसने एलेक्जेण्ड्रिया नामक नगर बसाया। इसका शासक टालमी सोटर (Potleomy Soter) बना जिसने 288 ई० पू० में इसे शिक्षा के एक केन्द्र के रूप में विकसित किया। पहली बार विश्व में 'संग्रहालय' का स्वरूप यहाँ स्थापित हुआ। यहाँ मूर्तियाँ तथा पूजा की वस्तुएँ, दान सामग्रियाँ, खगोल यंत्र तथा शल्य सामग्रियाँ, पशुओं के शारीरिक अवयव जैसे हाथी दाँत, पशुओं के चमड़े आदि संगृहीत थे जो 4 शती ई० तक बने रहे। मूलतः यह शिक्षा केन्द्र के रूप में व्याख्यान, विचार-विमर्श, भाषण आदि के लिए प्रसिद्ध था। यहाँ अनेक विद्वान अहूत किये जाते थे जैसे—टालमी, प्लीनी, हेरो, आर्केमेडिज, इरेस्टोथिनीज आदि जो व्याख्यान देते थे। मेसोपोटामिया में 3 हजार वर्ष ई० पू० में जिगूरतों का निर्माण हुआ। इनमें भी धार्मिक सामग्रियों का संग्रह किया गया था। असीरिया के पुस्तकालय भी संग्रहालय का रूप धारण किए थे। प्राचीन रोम और यूनान में व्यक्तिगत संग्रह करने की भावना बड़ी तीव्र थी। इसका ज्ञान हमें होमर से लेकर पुल्टार्क तक की रचनाओं से होता है। आगस्टस सीजर पुरातन तथा विचित्र वस्तुएँ संगृहीत करता था। ओलम्पिया तथा डेल्फी के यूनानी मन्दिरों में विजित स्थानों की सामग्रियाँ और मूर्तियाँ उठा लाते और उन्हें संगृहीत करते थे।

मध्ययुगीन यूरोप में व्यक्तिगत संग्राहकों (Collectors) की संख्या कम थी। इस समय राजा, सामन्त, धनिक लोग, उच्च पदासीन चर्च के कर्मचारी पुरा-स्थलों की खुदाई कराते थे तथा सोने-चाँदी के सिक्के, गहने, बर्तन और मोहरें, मूर्तियाँ, वेशकीमती कपड़े आदि एकत्रित करके रखते थे इस विश्वास के साथ कि इनसे वे अपने स्वामी को बीमारियों आदि से सुरक्षा प्रदान कर सकेंगे। हो सकता है इसके पीछे धन प्राप्त करने का लालच रहा हो। धुमक्कड़ लोग पौधे, जानवर, हाथीदाँत आदि विचित्र तथा उपयोगी वस्तुएँ जहाँ जाते थे वहाँ से उठा लाते थे। गोथिक समुदाय के चर्चों में संग्रहालय की तरह इन्हें सजा कर रखते थे तथा छापाखाने के अभाव होने पर भी हस्तलिखित ग्रंथों का लेखन होता था जिनमें इतिहास और धर्म ग्रन्थों की प्रधानता रहती थी। इन हस्त लिखित पोथियों को भी वहाँ सुरक्षित सजा कर रखते थे। आर्थिक उद्देश्य से राजकुमार और धनी वर्ग के लोग दो प्रकार की सामग्रियों का संग्रह करते थे—Naturalia (कलात्मक्र) और Artificialia (कलात्मक) इनके पीछे उद्देश्य था अपने पूर्वजों का गौरव प्रदर्शित करना। इस प्रकार तब संग्रहालय एक प्रकार का भण्डारगृह होता था। इन्हें केवल उन्हीं लोगों को दिखाते थे जो उनकी रुचि के होते थे। इन सामग्रियों को अपने महलों में रखते थे। तब संग्रहालय का कोई अलग भवन नहीं था। पीछे राजवाड़ों द्वारा एकत्रित इन्हीं संग्रह से यूरोप में संग्रहालय खुले। उनके द्वारा प्रारम्भिक, माध्यमिक तथा उच्च वर्गों को शिक्षा दी जाती थी। मूरे के अनुसार 18वीं शती के कुछ पहले मुद्राओं और मुहरों के लगभग एक हजार संग्रहालय स्थापित थे। इस समय का सबसे महत्त्वपूर्ण संग्रह आर्कड्यूक फर्डिनण्ड का था।

पुनर्जागरण के काल में इसके प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ। अब सम्पत्ति के लिए इनका संग्रह न करके ज्ञान और आनन्द के लिए इन्हें इकट्ठा किया करते थे। इसलिए अब संग्रहालय विशिष्ट कक्षों में स्थानान्तरित हुए जहाँ शोधकर्त्ता उस पर शोध कर सकता था। इसके लिए वे जीवित कलाकारों की कलाकृतियाँ, रोमन तथा यूनानी सभ्याता की स्रोत-सामग्रियाँ तथा प्रकृति के आश्चर्यों की वस्तुएँ एकत्रित की जाती थीं। इनकी बढ़ती संख्या के साथ विद्वानों को अध्ययन करने और उसपर टिप्पणियाँ लिखने के लिए आमंत्रित किया जाता था। इन्हें चर्चों में ही सजाकर रखते थे। अब पुराने खण्डहरों से मूर्तियों को ढूँढ़ने का कार्य रोम में प्रारम्भ हुआ। बढ़ती सामग्रियों की संख्या के कारण इन्हें सजाकर रखना शुरू हुआ जिन्हें विशिष्ट यात्रियों और मित्रों को ये दिखाते थे। यद्यपि जनता के देखने के लिए ये स्थान अभी भी खुले नहीं थे। एक नई स्थिति उत्पन्न हुई कला सामग्रियों की। जो बड़ी सामग्रियाँ थी उनको कमरे में रखना अब सम्भव नहीं था। इससे महलों में लम्बे, पतले तथा प्रकाशयुक्त कमरे बनाए गए जहाँ प्रदर्शों को ठीक से प्रदर्शित किया जा सके। ये स्थान 'वीथिका' कहलाए। यूनानी मिथक में प्रयुक्त शब्द म्यूजेज के आधार पर इन्हें 'म्युजियम' नाम दिया गया था। इस प्रकार 15वीं शती में सामग्रियों के संग्रह और विकास की क्रमिक और व्यवस्थित कला प्रारम्भ हुई।

सोलहवीं और सत्रहवीं शती में पहले पहल जनता का संग्रहालय स्थापित हुआ जो राजवाड़ों द्वारा चलाया जाता था। इसमें दर्शकों के प्रवेश की कोई छूट नहीं थी पर सुविधा अवश्य थी। वे संग्रहों देखकर न तो सुझाव दे सकते थे न उसकी आलोचना कर सकते थे वरन् उसकी मात्र प्रशंसा कर सकते थे। इससे स्पष्ट है कि ज्ञान और संग्रहालय उच्च वर्गों तथा चयनित लोगों

के लिए ही अभी बना रहा। बढ़ती सामाजिक स्थिति के प्रभाव में आकर व्यक्तिगत संग्रह के स्थानों को भी संग्रहालय की संज्ञा दी गई। इसी से जितने भी बड़े संग्रहालय हैं उनमें संगृहीत सामग्रियों में अधिकांश सामान्य लोगों की व्यक्तिगत सामग्रियाँ ही हैं जिन्हें उन्होंने स्वेच्छ या संग्रहालय को दान दिया है या सरकारों ने नियम बनाकर उन्हें खरीदा या अधिगृहीत किया।

अब संग्रहों का विवरण छपना शुरू हुआ। इसके पीछे कारण रहा होगा प्रचार। डच परिवार के एक व्यक्ति ट्राडेसकाण्ट ने अपने व्यक्तिगत संग्रह को अपने सम्बन्धी श्री आशमोल को दिया जिन्होंने इसे 1682 ई० में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय को दे दिया और 1956 ई० में उसकी विवरणिका भी प्रकाशित किया। इससे 1682 ई० में विश्व का पहला जन संग्रहालय अश्मोलीन (Ashmolean) संग्रहालय ऑक्सफोर्ड, इंगलैंड में स्थापित हुआ। फिर सर हंस स्लोने (Hans Sloane) द्वारा एकत्रित सामग्रियों को उसकी वसीयत के आधार पर ग्रेट ब्रिटेन के पार्लियामेण्ट ने अधिगृहीत कर लिया तथा उसी से 1753 ई० में British Museum की स्थापना की गई जो जनता के लिए 15 जनवरी, 1759 ई० में खुला। इसमें प्रवेश प्रतिबंधित था। प्रवेश के लिए जमानत देने के साथ आवेदन करने पर एक पखवारे में स्वीकृत प्राप्त होती थी। केवल सोमवार से वृहस्पति तक दिन में 11 से 12 बजे तक यह खुलता था। संभवतः इसका कारण रहा होगा सुरक्षा का अभाव, नियंत्रण की कमी, उसके खोलने बन्द करने वाले स्टाफ का न होकर स्वामी या एक अधिकारी का होना जो अल्प समय के लिए निश्चित दिनों में नियुक्त होता हो। वहाँ किन्हीं सामग्रियों का न परिचय-पत्र था न उसका व्यवस्थापक जो उनके विषय में कुछ बता सकता था। केवल निर्देशिका (Guidbook) के सहारे उन सामग्रियों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता था। इसमें कलात्मक सामग्रियों के साथ हस्तलिखित पोथियाँ, छपी पुस्तकें, औजार, चित्र, बहुमूल्य धातुओं के बर्त्तन, मुद्रा, मुहरें तथा पुरातन परम्परा की सामग्रियाँ भी संगृहीत थी। कुछ सामग्रियाँ खरीदी गईं तथा कुछ दूसरे संग्रहालयों द्वारा दान दी गई होती थीं। लगभग 30,000 पौण्ड के व्यय पर यह संग्रहालय स्थापित किया गया था।

उन्नीसवीं शती में लोगों की रुचि इस ओर जागृत हुई। तब संग्रहालयों का विकास अपनी चरमता पर पहुँच गया। व्यक्तिगत संग्रह की सामग्रियाँ चरों से उभकर संग्रहालयों में पहुँच गई। यहाँ प्रयोगशाला, शोधशाला तथा शिक्षण केन्द्र भी इनके साथ अब जोड़ गये। सर्वाधिक विकास विक्टोरिया के काल (Victorian Age) में हुआ। इस समय बड़ी संख्या में संग्रहालयों की स्थापना यूरोप में हुई क्योंकि अब लोगों में जन जागृति हो चुकी थी। फिर सिलसिला बढ़ता रहा।

[ब] भारत में संग्रहालय का इतिहास

अमेरिका में जहाँ 164,000,000 की जनसंख्या पर 1500 संग्रहालय थे तथा ग्रेट ब्रिटेन में 50,000,000 की जनसंख्या पर 800 संग्रहालय थे वही भारत में 436,000,000 की जनसंख्या पर 1934 में मात्र 100 संग्रहालय थे। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि संग्रहालय की दिशा में पाश्चात्य देशों की अपेक्षा भारत कितना पिछड़ा था। इसका कारण था यहाँ विदेशी शासन, गरीबी और अशिक्षा। इस संदर्भ में जानना आवश्यक है कि संग्रहालय के प्रति जनजागृत की भावना भारतीय परिवेश में विशेष रूप से किस प्रकार विकसित हुई।

प्राचीन काल

मानव की प्रवृत्ति संचयी रही है। वह जो कुछ भी पाता है उसको तब तक सचित (store) रखना चाहता है जब तक उसके पास उसके लिए जगह का अभाव न हो जाय। अभाव होने पर ही वह उनमें से आवश्यकता के अनुसार ही अनुपयोगी सामग्रियों को हटाता है। कभी-कभी वह विषम परिस्थितियों के कारण जैसे गरीबी, भुखमरी, बाहरी आक्रमण, सुरक्षा आदि की समस्याओं में फंस कर अपनी संचित वस्तुओं को अपने से अलग हटाता है, बेचता है, कहीं गाड़ता है, किसी को देता है आदि। संग्रह (collection) की यह प्रवृत्ति असभ्य पाषाणिक मानव के काल से जुड़ी हुई है। वह अपने कन्दराओं के, आवासों में अस्त्रों, हड्डियों, खाद्यान्नों, बर्तनों आदि का संग्रह करता था जो उस सभ्यता के समाप्त होने पर वहीं दबी हुई उत्खनन से आज प्राप्त होती है। इसी संग्रह की प्रवृत्ति ने ही आगे संग्रहालय (संग्रह करने वाले घर) का रूप ग्रहण किया।

यद्यपि प्राचीन काल में इसका स्वरूप न आज की तरह उभरा था न सार्वजनिक था। रामायण में दशरथ और रावण के महलों का जो वर्णन मिलता है उनके कमरों में पूर्वजों और देवताओं की मूर्तियाँ तथा शस्त्रास्त्रों के संगृहीत करने की चर्चा है। इनके लिए यहाँ 'चित्रशाला' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसके लिए संस्कृत ग्रंथों में 'चित्रकठिस' का भी उल्लेख हुआ है। पर इसका अभिप्राय संग्रहालय से नहीं लिया जा सकता। अधिक-से-अधिक इसे संग्रहालय का प्रारूप मान सकते हैं। उदाहरण के लिए हमारे पास अशोक के अनेक अभिलेख हैं, सोहगौरा के ताम्र पत्र अभिलेख में दो कोष्ठागारों का उल्लेख है साथ ही अन्य सूचनाएँ भी वहाँ संगृहित हैं, पर ये संग्रहालय नहीं कहे जा सकते। अजन्ता की गुफाओं में मूर्तियाँ, वास्तु सामग्रियाँ, चित्र, अभिलेख, धार्मिक आदि इकट्ठे मिलती हैं जिन्हें आज भले ही स्थानीय संग्रहालय का प्रथम सोपान मान लें पर उस समय के इतिहास के लिए वे आज के संग्रहालय नहीं कहे जा सकते। पर इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि वे प्राचीन भारत में किसी-न-किसी प्रकार संग्रहालय के पूर्व रूप में विद्यमान थे।

चित्रशालाएँ तीन प्रकार के बताई गयी हैं :–

(i) **महल में चित्रशाला** — यह प्रायः अन्तःपुर में होता था। जब यह शयनागार से सटा होता था तो इसे 'शयन चित्रशाला' कहते थे। इसका उद्देश्य था सोकर उठने पर 'मंगल्यलेख्य' (पवित्र एवं धार्मिक चित्रों) को देखना। नल के महल में ऐसी ही चित्रशाला थी। कभी-कभी अभिषेक चित्रशाला (स्नानघर से जुड़ी चित्रशाला) का भी उल्लेख है पर इसका उद्देश्य स्पष्ट नहीं है।

(ii) **व्यक्तिगत चित्रशाला** — इसमें व्यक्ति अपने स्वेच्छानुसार चित्रों को सजाते थे चाहे वे नैतिक हों या अनैतिक। बाणभट्ट ने देव, असुर, गाधर्व आदि के चित्रों के अंकन की बात यहाँ की है। नवसाहसांक चरित में जलक्रीड़ा, पानगोष्ठी, रासलीला आदि के चित्रों के सजाने का वर्णन है। ये स्पष्टतः व्यक्तिगत थाती रही होगी।

(iii) **जन चित्रशाला** — जनरुचि के अनुसार मन्दिर, बैठकों आदि के स्थान पर सुन्दरता हेतु चित्रों की योजना की जाती थी।

इनके अतिरिक्त हमारे संस्कृत ग्रंथों में सकटों पर घूमने वाली चित्रशालाओं का भी उल्लेख है। यह विश्व का पहला ऐसा उदाहरण है जहाँ लोगों की रुचि जागृत करने हेतु यह प्रयास किया गया था। विद्यामन्दिरों में भी सरस्वती, यमलोक, नाट्यशालाओं के आलेखन का उल्लेख है। सूतिका गृहों को भी चित्रों से सजाया जाता था। ये सभी चित्रगृह विनोद स्थान तथा कला के स्थान होते थे जिनकी उपयोगिता नागरिकों (शहरी लोगों) के विनोद लिए होता थी। इनमें चित्रों के साथ-साथ मूर्तियाँ और कला सामग्रियाँ भी प्रदर्शित की जाती थी। इसी की स्मृति आज केरल प्रान्त के त्रिवेन्द्रम में 'श्री चित्रालयन' नाम की संग्रहालय स्थित से होती है।

भवभूति ने 'वीथी' (गैलरी) का उल्लेख किया है। इसका अभिप्राय है बड़ा एवं विशाल कक्ष। चित्रवीथी के लिए उसने 'विमान पंक्ति' का उल्लेख किया है। संग्रहालय (चित्रशाला) के निर्माण की विधि नारद-शिल्प में दी गई है। वहाँ बताया गया है कि इसके छत पर शिखर होता था जिसपर कलश रहता था जो संभवतः मन्दिर की तरह इसे पवित्र प्रदर्शित करने हेतु बनाया जाता होगा। इसके सामने के भवन में एक छोटा द्वारा होता था तथा कई खिड़कियाँ होती थीं और बड़े-बड़े कमरे होते थे। इस प्रकार के भवन चौराहों पर बनाए जाते थे या मन्दिरों अथवा राजमहल के समीप होते थे। लोग वहाँ सरलता से पहुँच सकें तथा उसे जान सके। इसकी आकृति ढीलाकार होती थी जिसके मध्य में एक बड़ा कमरा होता था तथा उससे लगे छोटे-छोटे कमरे होते थे। बरामदों से कमरे जुड़े होते थे तथा ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी होती थीं और दर्शकों के बैठने के लिए आसन भी होते थे। कमोवेश आज के संग्रहालय का स्वरूप भी इसी आधार का विकसित रूप है।

उत्खनन से जो दफीने प्राप्त हुए हैं, उनमें कभी-कभी घड़ों में कई पीढ़ी तक के सिक्के वंशानुक्रम में रखे मिले हैं। जैसे बयाना निधि से प्राप्त गुप्त शासकों के सिक्के, सातवाहन शासकों की जोगलठम्मी निधि तथा उनसे भी प्राचीन मछुआटोली तथा गोलकपुर (दोनों पटना) से प्राप्त आहत-सिक्के (Punch-Marked Coins)। इस प्रकार की संग्रह निधियों को संग्रहालय का प्रथम चरण तो नहीं कहा जा सकता पर संग्रह की प्रवृत्ति का परिचायक और उस ओर बढ़ते चरण का संकेत माना जा सकता है। मथुरा से प्राप्त कुषाण राजाओं की अनेक मूर्त्तियाँ अपने पूर्वजों की पूजा को जहाँ आलोकित करती हैं वहीं उनकी प्रवृत्ति पूर्वजों की मूर्त्तियों का संग्रह की प्रवृत्ति प्रतीत होता है। भास के प्रतिमा नाटक में इस प्रकार के पूर्वजों की मूर्तियाँ बनाकर उनके पूजन की चर्चा की गई है।

व्यवहारिक रूप में प्रागैतिहासिक काल के मध्य प्रदेश के बेतवा घाटी में भोपाल के पास प्राप्त भीमवेटका को ले सकते हैं जिसकी दीवारों पर जो प्राकृतिक गुहावास बने थे उनमें जादुई-धार्मिक चित्रों का अंकन प्रारम्भिक मानवों द्वारा किया गया है। ऐसे ही गुहावास के चित्रांकन उत्तर प्रदेश के सोनभद्र क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं। दूसरी शती ई० पू० के सांची, भाहुत, अमरावती आदि के स्तूप भी इसी प्रकार वास्तु, मूर्ति, चित्र कला के साथ अभिलेखों द्वारा हमारा ज्ञानवर्धन करते हैं। इसी क्रम में अजन्ता, बाघ, एलौरा की गुफाओं में कलादीर्घा के रूप में प्रस्तुत चित्र तथा वास्तु कौशल और लेखों को पाते हैं, जो इस थाती को भविष्य के लिए संचित किए हैं। उत्तर प्रदेश के मथुरा में मट नामक स्थान को भी ले सकते हैं जहाँ प्रथम शती ईस्वी पूर्व की

कुषाण राजाओं की नाम लिखी मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। भले ही इसे वर्तमान शब्दावली में संग्रहालय न कहा जाय पर इसका स्वरूप लगभग वही है।

इसका सबसे श्रेष्ठ उदाहरण है दक्षिणभारत में तंजौर का वृहदीश्वर मन्दिर जो 11वीं शती के चोल शासक राजराज द्वारा निर्मित कराया गया था। इसका निर्माण विशाल प्रांगण में किया गया है जिसमें प्रवेश हेतु गोपुरम (विशाल प्रवेश द्वार) है तथा इसकी दीवारों पर मूर्तिकला का उभार, लेखयुक्त विवरण इसे संग्रहालय की सीमा में पहुँचा देते हैं। इसके प्रदक्षिणापथ में बने चित्र जो अत्यन्त कौशल से पत्थर पर उकेरे गये हैं और जहाँ परम्परा और इतिहास के जानकारी देने वाले लेख लिखे हैं जिनसे उसके अधिष्ठाता देवता शिव इसके निर्माता राजराज चोल, उसके गुरु कुरुवूर देवर तथा देवदासियों को संदेश उल्लिखित हैं कि देवता की प्रसन्नता के लिए, नृत्य-संगीत करती रहे और इसके पादाधार के लेख जिसमें वर्णित है इसमें दिए गए दानों का विवरण तथा यहाँ होने वाले त्योहारों का साक्ष्य, सामाजिक क्रियाएँ, नृत्य संगीत के विवरण इसे संग्रहालय की तरह का सामाजिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक कोटि में पहुँचाता है। इसके नियुक्त कर्मचारियों द्वारा इसकी व्यवस्था, रख-रखाव, परिरक्षण-संरक्षण, संरचनात्मता (Restoration) बनाए रखना संग्रहालय की कोटियों में इसे क्रियाओं, प्रदर्शों और व्यवस्था के आधार पर खड़ा करता है। भले ही इसे संग्रहालय की संज्ञा नहीं दी जा सकती। पर चूँकि जीवन के प्रत्येक पक्ष इससे प्रकाशित होते हैं अतः इसकी प्रकृति संग्रहालय की ही है। यदि इसे भारत का प्रथम व्यवस्थित संग्रहालय का सोपान माना जाय तो कोई चूक नहीं होगी। इसी क्रम में रखे जा सकते हैं महाबलीपुरम के रथ मन्दिर भी। जो अपने कोड़ में अनेक प्रकार की कलाकृतियाँ संजोये हैं।

यहाँ राजकीय लेखागार भी रहे होंगे जिनमें संग्रहीत ताड़पत्र, भोजपत्र, तामपत्र, लकड़ी, कपड़ा चिनपट पर लिखा लेख संग्रहीत रहा होगा जो समय के प्रवाह के साथ समाप्त हो गये होंगे। फिर भी दानपत्र वंशावली, कार्य, समाज, धर्म आदि की जानकारी संजोये अभी भी मिलते हैं। एक प्रकार के संग्रहालय ही कहे जा सकते हैं जहाँ ज्ञान का साधन मूतियाँ न होकर लेख ही हैं।

मध्य काल

पूर्व मध्यकाल में इसका विकास हुआ। राजपूत राजाओं के महलों की दीवरों और घरों में स्मारकों की सजावट, वस्त्रों को सजाकर रखना आदि प्रवृत्ति इसकी ओर बढ़ता चरण है। अब सौंदर्य प्रदर्शन के लिए उपयोग के साथ-साथ सजावट को भी स्थान मिला। यह भी स्वाभाविक है कि लोग अपने पूर्वजों की सामग्रियाँ प्रायः संकलित करके रखते हैं कि उनकी यादगार बनी रहे। दिल्ली के सुल्तानों तथा मुगल बादशाहों के महलों, हरमों और दरबारों का जो रूप आज हमारे सामने है। उनसे संग्रह की रुचि का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है जो क्रमशः बढ़ता गया। वे न केवल अपने पुरखों या अपने पूर्वज देश से लाई सामग्रियों को ही इकट्ठा रखते थे, वरन् इस देश की भी आकर्षक और कुतूहलजन्य वस्तुएँ संजोकर रखते थे। इसका स्पष्ट उदाहरण है दिल्ली के सुल्तान फिरोज तुगलक द्वारा अशोक के टोपरा और मेरठ के खम्भों को दिल्ली में मंगवाना। तानसेन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह पुराने तथा नए

सभी साज बनाने का उस्ताद था। यह संग्रह की रुचि के कारण ही कर सका होगा जहाँ पुराने साज इकट्ठे रखे जाते होंगे।

आधुनिक काल

अठारहवीं शती में जब यूरोपवासियों का भारत में पदार्पण हुआ चाहे वह जिस किसी भी कारण से हो वे यहाँ की सामग्रियाँ को ललचाई आँखों से देखते थे क्योंकि उनके लिए ये सभी नई थीं तथा इसके विषय में उन्होंने बहुत कुछ यात्रियों से सुन रखा था। यहाँ की माटी में बिखरी मूर्तियाँ, यहाँ के वनों में विचित्र जीव-जन्तु, राजवाड़ों के महलों में संगृहीत उनके पुरखों की विचित्रता भरी आकर्षक दैनिक जीवन की सामग्रियाँ, युद्ध के लिए कुछ आश्चर्यजनित नए प्रकार के वस्त्र और शस्त्रार्थ आदि ने उनको चकाचौंध कर दिया। वे इन सभी वस्तुओं को चाहे खरीदकर या बटोर कर जैसे भी हो सके इकट्ठा कर अपने पास रखना चाहते थे। इसके पीछे कारण था अपने महलों, घरों को सजाना। जो चीजें पुरानी थीं, जिनकी उपयोगिता न समझकर यहाँ के व्यवसायी, धनी लोग, पुजारी आदि फेंक देते थे या धन की कमी से प्रेरित होकर उन्हें बेच कर अपनी आवश्यकता की पूर्ति करते थे। वे विदेशी व्यापारियों, शासकों के घरों की शोभा बढ़ाते थे। विदेशियों का यह शौक था जो पीछे एक विधा बन गया। इस प्रकार व्यक्तिगत संग्रहालय की दिशा में नया प्रकरण जुट गया।

1857 के सिपाही विद्रोह के बाद अस्थायी शान्ति अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासकों को प्राप्त हुई। वे अपनी परम्परा अब स्थानीय लोगों पर थोपने लगे। पर स्थानीय परम्पराओं की अनदेखी नहीं कर सकते थे। शासक के लिये आवश्यक होता है शासित के विषय में सम्पूर्ण जानकारी रखना। इसलिए भारत के विषय में उन्हें जानकारी रखना आवश्यक हो गया। उन्हें यहाँ की भाषा, जातियों, परम्पराओं, उत्सवों, धार्मिक सम्प्रदायों, इतिहास, भूगोल, जीव-जन्तु, भू-प्रकृति, उत्पादन, शक्ति के स्रोत, उद्योग-धंधे, कृषि व्यवस्था का ज्ञान आवश्यक था। इसके लिए उन्हें अभिलेख, हस्तलिखित पोथियाँ, सभी प्रकार के साहित्य, स्मारकों, मूर्तियों, आर्थिक इतिहास का स्वरूप जो पहले था, सिक्के आदि का संग्रह और उनको सूचीबद्ध कराना पड़ा। इसके दो उद्देश्य थे ज्ञान की वृद्धि तथा भारत के विषय में जानना। इसके लिए विभिन्न प्रकार की सर्वेक्षण संस्थाएँ स्थापित हुई यथा — भारतीय सर्वेक्षण, भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, भारतीय जीव-जन्तु सर्वेक्षण, भारत का भूगर्भ सर्वेक्षण आदि। इनका उद्देश्य था खोज और विशिष्ट प्रकार का शोध। इसके साथ ही गणित, नृशास्त्र, रीति, परम्पराएँ तथा कानून के ज्ञान की आवश्यकता शासकों को थी। इस रुचि के कारण वे इन विषयों पर सामग्रियों का संचय करने लगे। इसके पता लगाने के लिए जब यहाँ वारेन हेस्टिंगज गवर्नर जैनरल थे तब 1784 में विलियम जोन्स की अध्यक्षता में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना की गई।

19वीं शती के प्रारम्भ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने लंदन ने भारत से भेजी गई पुरानी पुस्तकों और हस्तलिखित पोथियों का जो भारत से सम्बन्धित थी तथा यहाँ पर अंग्रेजी कर्मचारियों द्वारा अपने घरों में संग्रहित किये गये थे का एक संचयागार बनाया जिसका नाम ओरियण्टल रिपोजिटरी (Oriental Repository) रखा। यह भारतीय सामग्रियों के संग्रहालय की ओर पश्चिम के देश

में प्रथम चरण कहा जा सकता है। इस संग्रह की वृद्धि समय-समय पर क्रय, दान आदि से होती रही। 19वीं शती के मध्य एक योजना 'इंडियन म्युजियम ऑफ फाइन एण्ड इण्डस्ट्रियल आर्टस' की स्थापना बनाई गई। पर आर्थिक संसाधनों के अभाव में उसे बंद कर दिया गया। 1870 ई० के लगभग इससे सम्बन्धित सामग्रियाँ को दूसरे-दूसरे संग्रहालयों में भेज दिया गया। औद्योगिक कला के दक्षिणी केसिंगटन के संग्रहालय में जिसे आज विक्टोरिया और एलबर्ट संग्रहालय कहा जाता है कि भारतीय सेक्शन को दिया गया तथा पुरातात्त्विक मूतियाँ और प्राकृतिक इतिहास की सामग्रियों को ब्रिटिश म्युजियम लन्दन को दिया गया। अब भारतीय संग्रहालय की जागृति होने से 1819 ई० में भारत में कलकत्ता में एशियाटिक सोसाइटी ने 'ओरियेण्टल म्यूजियम ऑफ एशियाटिक सोसाइटी' की स्थापना की। यही पीछे 1866 ई० में इंडियन म्युजियम कहा गया जो 1875 ई० में अपने नये भवन में स्थापित किया गया और 1876 ई० में इसे जनता को सौंपा गया। यह भारत का पहला संग्रहालय था।

अब इसका महत्व भारतीय धनिकों, राजवाड़ों ने भी समझा। उन्होंने भी अब अपनी बहुमूल्य, अधिक तथा अनुपयोगी कलात्मक और पुरानी सामग्रियों को बेचने और फेंकने के स्थान इनको संगृहीत रखना ही उचित समझा। अब ये उनकी व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में संगृहीत कर रखी गई। पर उनके रख-रखाव, सजावट, बनावट तथा प्रदर्शन और उनके महत्त्व से वे अनभिज्ञ थे। वे केवल शोभा की सामग्री मात्र तथा घरों की सजावट के हेतु प्रयोग की जाती थीं। जब कभी विदेशी गोरों की निगहों किन्हीं पुरानी बहुमूल्य एवं आकर्षक चीजों पर टिक जाती थी तो वे मुँहमाँगी कीमतों पर उसे खरीद लेते थे। यह क्रिया वहाँ के सरकार द्वारा भी की जाती थी। आज इंगलैंड के अनेक संग्रहालयों मे जो भारतीय कला-संस्कृति की बहुमूल्य प्रतीकात्मक वस्तुएँ संगृहीत हैं उनके पीछे यही राज है। इनके अतिरिक्त कलाकृतियों तथा पुरातन सामग्रियों (Antiques) के बेचने वाले लोगों ने भी उनकी बड़ी सहायता की। इनकी दूकानों पर खरीद कर, खोज कर, उठाकर, माँगकर लाई गई असल और नकल (prototypes) सामग्रियाँ बिकती थीं। इनसे रुचि वाले लोग सामग्रियाँ खरीद कर अपने व्यक्तिगत संग्रहालयों में सजाते थे। पर ये संग्रहालय तब मात्र ऐसे संचयागार (Store House) थे। जहाँ सौंदर्यवर्धन के लिए सामग्रियाँ सजाई जाती थीं। इस प्रकार के उदाहरण यूरोप में भरे पड़े हैं। वहाँ लावरे (Louvre), वैक्टिकन (Vazctican), चैन्टिली (Chantilly), हैम्पटनकोर्ट (Hamptoncourt) आदि बड़े संग्रहालय इसी के रूप में तथा इसी दृष्टि से विकसित हुए। ऐसे ही थे भारत में अंग्रेज साहबों के बंगले का बैठक तथा राजवाड़ों की पुराने महलों के कक्ष भी सजाये जाते थे कि उसमें बैठाने पर उन्हें आत्म गौरव का ज्ञान हो। इस प्रकार पुनर्जागरण (Renaissance) के युग में संग्रहालयों का स्वरूप बनना प्रारम्भ हुआ, जो वर्तमान संग्रहालय की परिभाषा के अनुरूप किसी-न-किसी प्रकार उचित बैठता था। अब वैज्ञानिक प्रवृत्ति भी साथ-साथ विचारों और क्रियाओं में संग्रहालयों की स्थापना में सन्निहित होती गई। इसके परिणामस्वरूप संग्रहालयों के स्वरूप में एक नई क्रान्ति आई। **ग्रेसे मोरले** (Grace Morley) के अनुसार— *"Accumulation of art, decorative arts, antiquities in the palaces of kings & nobles of the periods the art in churches & cathatred anticipated in their collecting museums of Archaeology & Art."* (कला का संचयन, सजावटी कल, राजाओं महलों के

बैठके और चर्चों में संग्रह का युग ही पुरातत्त्व और कला के संग्रहालय का पूर्ण परिकल्पिकत रूप कहा जा सकता है।

उन्नीसवीं शती में यूरोप तथा अनेक एशियाई देशों में जनता की भावनाओं के अनुसार तथा जनता के लिए संग्रहालयों की स्थापना प्रारम्भ हुई। उस समय की सामान्य जनता की रुचि और उनके विचार में इनकी स्थापना शिक्षा के एक सहयोगी माध्यम के रूप में हुई। यद्यपि इनका स्वरूप और जनरुचि अभी इतना विकसित नहीं था कि इनका उपयोग शिक्षा के अंग के रूप में स्वीकार किया गया हो या शोध की दिशा में इनका विशेष योगदान माना जाता हो। ये दोनों ही आधुनिक विकसित स्थिति के संग्रहालयों के परिप्रेक्ष्य में प्रारम्भ हुई हैं। वह प्रथम संग्रहालय जो एक मात्र शिक्षण के लिए प्रारम्भ किया गया तथा जिसके पीछे उद्देश्य था शैक्षणिक कार्यों को विकसित करना लन्दन का Victorian and Albert Museum था। इसकी स्थापना आज से लगभग डेढ़ सौ वर्ष पुरानी है। ऐसे अनेक संग्रहालय विभिन्न स्थानों पर स्थापित हुए। समय के प्रवाह और संग्रह की बढ़ती संख्या के साथ प्रदर्शन की नई तकनीक के प्रयोग के कारण आज इसका स्वरूप अपनी मौलिक अवस्था की अपेक्षा अधिक परिवर्तित और विकसित है। फिर भी इसकी विश्वसनीयता वही है। इसके बाद से ही उन्नीसवीं शती के अन्त में स्थापित संग्रहालयों के मूल उद्देश्यों में अन्य पक्षों के साथ सर्वाधिक बल दिया जाने लगा कि शिक्षा ही इसका महत्वपूर्ण अनिवार्य उद्देश्य है। विश्व के देशों में भी यह उद्देश्य बीसवीं शती से स्वीकार किया गया।

द्वितीय विश्वयुद्ध तक संग्रहालयों का स्वरूप वर्तमान से भिन्न था। उसमें मुख्यतः तीन कार्यों को महत्व दिया जाता था—सामग्रियों को संगृहीत करना (Collection), परिरक्षण (Preservation) तथा शोध के लिए उनका उपयोग करना। इस समय लोगों का देशान्तर गमन होने लगा था। बढ़ती संग्रह की रुचि के कारण बाहर की वस्तुएँ भी खरीद कर पर्यटक अपने देश में लाने लगे। अतः सामग्रियों के संग्रहण में अब विदेशों की भी सामग्रियाँ संगृहीत की जाने लगी। उनको बड़े ही कलात्मक रीति से सजाते और संरक्षित करके रखते थे। शिक्षा की बढ़ती आकांक्षा और स्थिति के अनुसार उनका अध्ययन ज्ञान की शाखा के विकास के लिए किया जाता था। पर जो मूल अवधारणा है शिक्षित-अशिक्षित, विद्वान-मूर्ख, गृहस्थ और घुमक्कड़ को एक ही प्रकार से आकर्षित करने और उनके अनुरूप शिक्षा देने का कार्य प्रारम्भ में यहाँ एक प्रकार से गौड़ हो गया था। इसका कारण था कि वस्तुओं का प्रदर्शन (display) उचित रीति से नहीं किया जाता था कि दर्शक को वीथी में भ्रमण करते समय उस विद्या के ज्ञान का आभास होने लगे। **डॉ० सत्यप्रकाश** के अनुसार यह एक संग्रहालय का आवश्यक अंग है—*'The education must be active & not passive and that it must be immediately connected with the life of the people is the need of the day'*. अर्थात् आज की आवश्यकता है कि शिक्षा सक्रियात्मक हो नकारात्मक नहीं और जीवन व्यापार की ओर उन्मुख हो। इसकी प्राप्ति तभी हो सकती है जब प्रदर्शों (exhibits) को रुचिकर और कलात्मक रूप में सजाकर रखा जाय कि दर्शक उनकी ओर आकृष्ट हो सकें। यही एक सामान्य बंधन है जो संग्रहालयों सन्निहित सम्पूर्ण सामग्रियों को एक में मिले होने से उसे संग्रहालय का नाम देता है : *'This is the common bond uniting all kinds of museums worth the name.'* —**Dr. B. C. Chhabra**

आधुनिक काल में संग्रहालयों के स्वरूप में एक नया मोड़ आया। कुछ नए देशों यथा संयुक्त राज्य, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड आदि में प्राकृतिक इतिहास के अलग संग्रहालय स्थापित हुए। पर इसके साथ प्रागितिहास, स्थानीय वंशपरम्परा, विदेशी उद्योग आदि को भी जोड़ा गया। आज विविध प्रकार के संग्रहालयों की स्थापना अलग-अलग उद्देश्य से होनी प्रारम्भ हो गई है— जैसे बोस्टन म्युजियम ऑफ फाइन आर्टस, शिकागो म्युजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री, रायल ओरियेण्टल म्युजियम, टोरोन्टो, मेट्रोपोलियटन म्युजियम न्यूयार्क आदि। इन संग्रहालयों में विश्व के विभिन्न देशों के प्राप्त एक विधा के संग्रह को रखा गया है। पर दूसरी ओर ऐसे भी संग्रहालयों का विकास हुआ जिनका स्वरूप देशज या क्षेत्रीय था। ऐसे संग्रहालय पेरू, मैक्सिको या पुरातन एशियाई देशों में बनाए गए। इनमें राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय आधार पर संकलित सामग्रियों को एकत्रित किया गया। इसका कारण था वहाँ उपलब्धियों का बाहुल्य तथा उनके इतिहास की पुरातनता की गहराई। इसमें एक दोष बना रहा कि इनके प्रदर्शन अत्याधिक बहुविधीय प्रकार के नहीं थे। इसी सन्दर्भ में समन्वित संग्रहालयों (Composit Museums) की भी बात हम कर सकते हैं। कुछ ऐसे भी संग्रहालय इन्हीं के साथ विकसित हुए जिनमें एक साथ अनेक ज्ञान वर्गों की सामग्रियाँ जैसे मूर्तियाँ, चित्र, वस्त्रोद्योग, पात्रकला, शस्त्रास्त्र अलग-अलग वीथियों में (Galleries) कमरो, बरामदों, बड़े हॉलों, कमरे में बने रैकों पर सजाए जाते हैं। यहाँ हम एक ही स्थान पर अनेक रुचि एवं प्रकार की एकत्रित सामग्रियाँ देख सकते हैं। **Benjamin Ives Gilman** के शब्दों में—*"As a matter of convenience collections of Science & collections of art are alike called museums."* अर्थात् *सुविधा के अनुसार समान रूप से कला और विज्ञान का संग्रह संग्रहालय कहलाता है।* इनमें विज्ञान और कला दोनों की सामग्रियों का समान स्थान होता है। पर आगे उन्होंने इनमें कला के प्रदर्शों को ही विशेष महत्त्व दिया। तभी कहा है कि 'As exhibits, objects of art serve a purpose for which they were intended and object of Science a purpose for which they were not.' अर्थात् *प्रदर्शों के रूप में कला सामग्रियाँ ही उस उद्देश्य को पूरा करती हैं जिसके लिए वे एकत्रित की जाती है पर विज्ञान की सामग्रियों के साथ ऐसा कुछ नहीं होता।* यहाँ यह कहना कि संग्रहालय में कला सामग्रियों की ही विशेष उपयोगिता होती है के पीछे कारण यह है कि सामान्य दर्शकों की रुचियों, ज्ञान की सामान्य परिधि में आने तथा विकास की परम्परा से परिचय देने और आकर्षण का केन्द्र संग्रहालयं को बनाने में कला सामग्रियाँ ही महत्त्वपूर्ण हैं।

एशियाई देशों में भारत का विशेष स्थान है। पर यहाँ संग्रहालयों का विकास पिछले पाँच दशकों में ही द्रुतगति से हुआ है। 1935 ई० में Carnegie Corporation, New York ने लन्दन के Museum Association को 10,000 डालर दिया कि भारत के संग्रहालयों का सर्वेक्षण करकर उसकी एक डाइरेक्टरी तैयार कराई जाय। इसके अनुसार भारत के संदर्भ में यह दो खण्डें में तैयार की गई। इसके द्वितीय खण्ड का शीर्षक था — The Museums of India। भारत में शासन करने वाली विदेशी सरकार ने भारत के संग्रहालयों के लिए Markham Hargreaves के अधीन एक समिति बनाई जिसने 1936 ई० में अपने प्रतिवेदन में यह बताया कि यहाँ कुल 105 संग्रहालय इस समय स्थापित हैं। पर इनमें से कुछ स्कूल तथा कॉलेजों द्वारा उन्हीं के परिसर में स्थापित हैं जो स्वतंत्र रूप से संग्रहालय की कोटि में नहीं आते। इनको अलग करने पर केव

तथा राज्य सरकारों और व्यक्तिगत सहयोगों से चलाई जाने वाली शुद्ध संग्रहालय के स्वरूप की संस्थाओं की संख्या तब मात्र 80 बताई गई। इतनी बड़ी जनसंख्या और क्षेत्रफल वाले देश में इतने कम संग्रहालयों का होना एक आश्चर्य की बात बनी रही। पर धीरे-धीरे इनका विकास हुआ। 1950 ई० के बाद इनमें एक अप्रत्याशित बदलाव आया। अब तक जहाँ इनकी संख्या सीमित थी वहीं अब इनका विस्तार हुआ। अभी तक इनमें जहाँ केवल राष्ट्रीय स्तर के जहाँ प्रदर्श होते थे वहाँ विश्व के विभिन्न क्षेत्रों के प्रदर्शों को प्राप्त कर यहाँ संगृहीत किया गया। उनके प्रदर्शन की दिशा में आधुनिक वैज्ञानिक तकनीक का भी प्रयोग किया जाने लगा था। समन्वित संग्रहालयों के साथ उनके स्वरूप में विशेषीकरण को भी स्थान दिया जाने लगा। इसके चलते इनके प्रकारों का विकास हुआ जैसे—कला संग्रहालय, ऐतिहासिक संग्रहालय, नृशास्त्रीय संग्रहालय, प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, उद्योग एवं तकनीकी विज्ञान से सम्बन्धित संग्रहालय, स्वास्थ्य संग्रहालय, बालसंग्रहालय, शिक्षण संस्थाओं के संग्रहालय आदि। इन संग्रहालयों की स्थापना में सरकारी, व्यक्तिगत, नगरपालिकाओं, समाजसेवी संस्थाओं तथा शैक्षणिक संस्थाओं का भी हाथ है जिनके द्वारा ये स्थापित तथा संचालित किये जाते हैं।

यहाँ 1909 ई० तक प्रिंस ऑफ वेल्स म्युजियम, बम्बई तथा इण्डियन म्युजियम, कलकत्ता और गवर्नमेण्ट म्युजियम, मद्रास अत्यन्त विकसित संग्रहालय थे। पर संग्रहालयों का विकास क्रमशः उन्नीसवीं शती के अन्त तथा बीसवीं शती के 3-4 दशकों में बड़ी द्रुतगति से हुआ। इस समय इनमें संख्यात्मक वृद्धि देखी गई न कि गुणात्मक। कुछ व्यक्तियों द्वारा स्थापित संग्रहालय अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें हम परिगणित कर सकते हैं—महाराजा जयपुर का संग्रहालय, जयपुर, आशुतोष संग्रहालय कलकत्ता, (मालतीजी द्वारा स्थापित) भारत कला भवन, काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय, वाराणसी, कैलिको संग्रहालय, अहमदाबाद, क्राफ्ट संग्रहालय, नई दिल्ली आदि। फिर राज्य संग्रहालयों की स्थापना विभिन्न राज्यों ने अपने स्रोतों और उपलब्धियों के आधार पर किया। पर जब उनका विकास पर्याप्त बाधित हुआ तो राष्ट्रीय स्तर पर एक संग्रहालय कर्मचारियों का संगठन बनया गया। जिसे Museum Association of India (अखिल भारतीय संग्रहालय परिषद) नाम दिया गया। इसके प्रथम अध्यक्ष थे राय बहादुर के० एन० दीक्षित तथा मंत्री थे श्री रणछोड़ कालजी ज्ञानी। इसकी स्थापना 1944 ई० में हुई थी। तबसे राष्ट्रीय संग्रहालय की मांग शुरू हो गई कि यह देश के संग्रहालयों का मार्गदर्शक बने तथा उसमें पूरे देश की मुख्य विधाओं और कृतियों का संकलन हो कि देश का व्यक्तित्व वह उजागर कर सके। पर इसकी पुरजोर माँग 1954 ई० में इस संस्था के अध्यक्ष पद से डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल ने अहमदाबाद अधिवेशन में पुनः दुहराई। इसके परिणामस्वरूप केन्द्र नई दिल्ली में एक राष्ट्रीय संग्रहालय की स्थापना हुई जो देश के अन्य संग्रहालयों के लिए आदर्श पथ-प्रदर्शक है। यहाँ सम्पूर्ण देश की कलाकृतियों, सभ्यताओं और विकास के विविध सोपनों की सामग्रियाँ यथार्थ में या दूसरे संग्रहालयों के नकल पर एकत्रित हैं। साथ ही, उसमें अनेक वीथियों के भीतर भारतीय ज्ञान की विविध शाखाओं के साथ विश्व स्तर पर हमारी सांस्कृतिक विरासत की धरोहर तथा उनके साथ हमारे सम्बन्ध का सूत्र भी दीखता है।

यों तो भारत में संग्रहालयों का प्रारम्भ 1784 ई० में स्थापित Asiatic Society of Bengal,

Calcutta की स्थापना के साथ जुड़ा है। इसी समय से संग्रहालय भी सोसाइटी के साथ-साथ स्थापित हुआ था। धीरे-धीरे यह विभिन्न चरणों में विकसित होता रहा। इनमें पाँच सोपान प्रमुख हैं।

आधुनिक भारत में संग्रहालय विकास के पाँच सोपान :—

(i) ईस्ट इण्डिया कम्पनी काल (1757-1858 ई०)

(ii) विक्टोरिया काल (1858-1901 ई०)

(iii) कर्जन और मार्शल काल (1901-1928 ई०)

(iv) स्वाधीनता पूर्व काल (1928-1947 ई०)

(v) स्वाधीनोत्तर काल (1947 ई० से अबतक)

(i) ईस्ट इण्डिया कम्पनी काल (1757-1858 ई०)—इस समय एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना दो उद्देश्य से की गई थी—(1) प्रशासित क्षेत्र भारत के बारे में सब कुछ जानने के लिए, (2) शासन के व्यवहारिक पक्ष के लिए परिचित होने के लिए। इस समय 1772-1786 ई० में यहाँ वारेन हेस्टिंगज गवर्नर जनरल था जो स्वयं भारत के विषय में जानने का इच्छुक था। साथ ही, शासित वर्ग ने बहुत बड़ी संख्या में पुरा सामग्रियों को एकत्रित किया था जो क्रमशः बढ़ती जाती थीं। उन्हें पंजीकरण, संरक्षण, प्रदर्शन, प्रकाशन आदि के लिए कहीं संग्रहित करना आवश्यक था। इसके लिए वारेन हेस्टिंगज ने इसकी व्यवस्था विक्टोरिया मेमोरियल हाल में किया। इसमें सहयोग प्राप्त हुआ था सर विलियम जोन्स का जो हेस्टिंगज की तरह ही भारतीय विद्या में रुचि रखता था। पर इसके बाद कार्नवालिस के समय (1786-1792 ई०) इसका विकास वाधित हुआ क्योंकि वह भारतीय विद्या का विरोधी था। जेम्स प्रिंसेप ने 1837 ई० में नेशनल संग्रहालय की स्थापना की अपील किया जो अस्वीकार हो गया। 1856 ई० में सोसाइटी ने कलकत्ता में 'इम्पीरियल म्युजियम' की स्थापना का प्रस्ताव रखा पर वह भी बेकार रहा। 1866 ई० में सरकार ने इण्डियन म्युजियम एक्ट पास कर सोसाइटी के संग्रहालय का नाम 'इण्डियन म्युजियम' रखा तथा एक समिति को इसकी व्यवस्था सौंप दिया। यह स्वशासित संस्था बनी तथा इसका स्वरूप बहुउद्देशीय था जिसमें विभिन्न विषयों के प्रदर्श रखे गये। पर धनाभाव से इसका विकास नहीं हो सकता था। 1840 ई० में 'म्युजियम ऑफ इकोनामिक जियोलाजी' की स्थापना की गई कि देश के आर्थिक संसाधनों का अध्ययन हो सके एवं रानीगंज (पश्चिमी बंगाल) के कोयला खानों को बढ़ावा दिया जा सके। इसका शैक्षणिक महत्व नहीं था।

इस समय सरकारी नौकरियों के लिए भारतीयों की आवश्यकता तत्कालीन आंग्ल सरकार को थी जिसकी पूर्ति के लिए अंग्रेजी शिक्षा देने के लिए भारत में अंग्रेजी विद्यालयों की स्थापना पर वल दिया गया। इसी क्रम में 1781 ई० में मदरसा, 1791 ई० में वाराणसी में संस्कृत कॉलेज और 1880 ई० में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज स्थापित हुए। पर संग्रहालय को महत्त्वहीन, अलाभकर, वाणिज्य की दृष्टि से निरर्थक मानकर तथा जनरुचि के अभाव के कारण कोई प्रश्रय नहीं मिला। इससे इस समय तक मात्र पाँच संग्रहालय ही स्थापित हुए।

(ii) विक्टोरिया काल (1858-1901 ई०)—इस समय प्रान्त की राजधानियों में सामान्य या बहुद्देशीय संग्रहालयों की स्थापना की गई। 1861 ई० के आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया के संविधान में पुरातात्त्विक खोजों की बात कही गई और इस पर ज़ोर दिया गया। इस विभाग

के प्रथम डायरेक्टर जेनरल सर एलेक्जेण्डर कनिंधम ने पुरातात्त्विक खोजों का कार्य प्रारम्भ किया और इसके द्वारा प्राप्त सामग्रियाँ या तो समीपस्त प्रान्तीय संग्रहालयों में या इण्डियन म्यूजियम, कलकत्ता भेजी जाती थी। इसीसे कनिंघम ने शुंग कालीन भरहुत के स्तूपों के पुरावशेषों को इण्डियन म्युजियम, कलकत्ता भेज दिया। 1858-1878 ई० के बीच आधे दर्जन संग्रहालयों की स्थापना दूसरे चरण के बीस वर्षों में हुई। मथुरा के अंग्रेज कलेक्टर एफ० एस० ग्रोसे ने बहुत-सा संग्रह वहाँ अवैज्ञानिक खुदाई कराकर तथा वहाँ के टीलों से किया था जिन्हें इकट्ठा संग्रह के लिए 1874 ई० में एक राजकीय संग्रहालय मथुरा में स्थापित किया गया और वहाँ जनता के देखने के लिए उन्हें रखा गया। फिर 1887 ई० तथा 1897 ई० में जब महारानी विक्टोरिया का क्रमशः रजत और हीरक जयन्ती वर्ष मनाया गया तब इसी समय चेन्नई (मद्रास) में विक्टोरिया टेकनिकल इन्स्टीच्यूट की स्थापना हुई जो हस्तकला का संग्रहालय था। 1899 ई० में कर्जन ने भारत के ब्रिटिश राज्य से बनने वाले सम्बन्धों और ब्रिटिश राज्य के भारत में होने वाली घटनाओं को जनता को दिखाने के लिए एक संग्रहालय की संकल्पना की थी जो 1921 ई० में ब्रिटिश मेमोरियल हाल के रूप में स्थापित हुआ।

(iii) कर्जन और सर जान मार्शल का काल (1901-1928 ई०)—जब लार्ड कर्जन भारत के गवर्नर जेनरल नियुक्त हुए तो संग्रहालय द्वारा जन-जागृति को विशेष बल मिला। उनका मानना था कि भारत में सांस्कृतिक संरक्षण की दिशा में कम ध्यान दिया जा रहा है। अतः उन्होंने इसकी ओर विशेष ध्यान दिया। इसके लिए जब सर जॉन मार्शल 1902 ई० में आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया के डाइरेक्टर जेनरल नियुक्त हुए तो इस दिशा में विशेष व्यवस्था प्रारम्भ हुई। उन्होंने कनिंघम की तरह न केवल संग्रहालयों में प्रदर्शों के बढ़ाने पर जोर दिया अपितु एक तारतम्य में पुरातात्त्विक स्थलीय संग्रहालयों (Archaeological Site Museums) की स्थापना कराया। इनका उद्देश्य था कि उस स्थान के पुरातात्त्विक उत्खनन की सामग्रियों का वही संग्रह करना कि दर्शक उनके स्थानीय संदर्भ में देखकर उनका अध्ययन करें। ये स्थलों के पास ही बनाये जाते हैं। इस प्रकार का पहला संग्रहालय 1910 ई० में सारनाथ में स्थापित किया गया। ऐसे संग्रहालय भारत के आर्कियोलॉजिकल सर्वे के देखरेख में चलये जाते थे।

(iv) स्वतंत्रता-पूर्व काल (1928-1947 ई०)— 1939 ई० में पुराविद् ऊले को भारत सरकार ने आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया के कार्यों के सर्वेक्षण के लिए आमंत्रित किया। उन्होंने साइट म्युजियमों की दुर्दशा को देखकर इनको बन्द करने की संस्तुति किया, पर यह माना नहीं गया। इसका कारण था कि वे बहुत भीतर के स्थानों में बने थे, जहाँ उन तक पहुँचने का साधन नहीं था, और वहाँ व्यवस्था सम्बन्धी कठिनाइयाँ थीं। ऐसा ही एक संग्रहालय नागार्जुनीकोण्डा में है जहाँ नावों से जाया जाता है। इनमें सक्षम कर्मचारी भी नहीं थे, भवन भी समुचित नहीं था, प्रदर्श भी ठीक से व्यवस्थित नहीं रखे गए थे। पर अब परिस्थितियाँ बदल गई हैं। प्रमुख संग्रहालयों के स्थलों को पर्यटन मानचित्र में रखा गया है, आने जाने की सुविधा बढ़ाई गई है, कर्मचारियों की उचित व्यवस्था की गई है, उपयुक्त भवनों का निर्माण हुआ है, प्रदर्शो को भली प्रकार संयोजित किया गया है, इनका एक्सकवेशन रिर्पोट प्रकाशित किया गया है। वहाँ कुछ पुस्तकों का संग्रह भी किया गया है कि आगन्तुक र्समति संदर्भित प्रदर्श का अध्ययन कर सकें। साथ ही उत्खनित सामग्रियाँ वहाँ संग्रहित की जाती हैं। इन स्थलीय संग्रहालयों की उचित

व्यवस्था मार्टिनर ह्वीलर के डाइरेक्टर आर्कियोलॉजी के पद पर नियुक्ति के बाद सम्भव हो सकी। उनका मानना था कि साइट से प्राप्त सामग्रियाँ वही के साइट म्युजियम में ही रखी जाय कि दर्शक उसे सदर्भित परिप्रेक्ष में देखें।

जब 1965 ई० में उनकी अध्यक्षता में भारत सरकार ने एक समिति गठित किया तो उन्होंने इसके लिए तीन आधार सुझाये — पर्याप्त छोटी-बड़ी प्राप्त सामग्रियाँ संजोई जाय, प्रभावक महत्वपूर्ण स्मारक और पुरातात्त्विक सामग्रियाँ उसी स्थल पर ही रखी जाय तथा दर्शक को वहाँ पहुँचने की सुविधा प्रदान की जाय।

मार्शल की अध्यक्षता में एक महत्त्वपूर्ण संग्रहालय से संबंधित कार्य हुआ कि आर्केलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया की देखरेख में 1929 ई० में 'सेन्ट्रल एशियन एण्टीक्वीटीज म्युजियम, नई दिल्ली में स्थापित हुआ। इसमें औरेलस्टीन द्वारा उत्खनित मध्य एशियाई पुरानिधियों का संयोजन किया गया। आज यह भारत के राष्ट्रीय संग्रहालय का एक अंग है तथा संसार के छः बड़े संग्रहालयों में से एक है।

1912 ई० में बोजेल जब आर्कियोलॉजिकल सर्वे के डाइरेक्टर जेनरल बने तब संग्रहालयों की संख्या 39 हो गई थी। अगले बीस वर्षों में इनकी संख्या में अधिक वृद्धि हुई। हारग्रीव्स के डाइरेक्टर जेनरल होने पर संग्रहालयों की गणना पुनः 1936 ई० में की गई। तब भारत तथा पाकिस्तान को मिलाकर 105 संग्रहालय थे। पर 1939 ई० से 1945 ई० में विश्व में अशान्ति के कारण इसके भी विकास में कमी आई। फिर चार वर्ष के लिए ह्वीलर 1944 ई० से 1948 ई० तक जब अपने पुराने पद पर नियुक्त हुए तो साइट म्युजियम्स को उन्होंने स्वतंत्र संग्रहालय का दर्जा दिया तथा इनके देखरेख का कार्य क्षेत्रीय सुपरिटेण्डेण्ट ऑफ आर्केलॉजी को सौंप दिया गया कि अधिक उचित विकास हो सके।

(v) आधुनिक काल (1947 ई० से अबतक)— स्वतंत्र भारत के संविधान में संग्रहालय को राज्यों की विषय सूची में रखा गया है। अब संग्रहालय खोलना तथा उसका रख-रखाव प्रान्तीय सरकारों का विषय बन गया है। पर इसने केन्द्रीय सरकार को संग्रहालयों के अनुदान देने तथा उनपर अपना नियन्त्रण बनाए रखने के अधिकार से वंचित नहीं किया गया है। पर नए संग्रहालयों के खोलने, विश्वविद्यालीय संग्रहालयों, संस्थागत तथा व्यक्तिगत संग्रहालयों के विषय में इसके हस्क्षेप का अधिकार नहीं था। अतः विशिष्ट संस्थाओं द्वारा संचालित संग्रहालय तथा राष्ट्रीय संग्रहालयों की भी स्थापना होने लगी। राष्ट्रीय संग्रहालय का दायित्व केन्द्रीय सरकार को दिया गया है।

राष्ट्रीय संग्रहालय की स्थापना की बात मरखम और हारग्रीव्स ने 1936 ई० में की थी। उनका सुझाव था कि इन्सपेक्टर जेनरल ऑफ म्युजिम की नियुक्ति कर उसे 'इम्पीरियल म्युजियम' को सौंपा जाय। 1937 ई० में इण्डियन ओरियेण्टल कान्फरेंस में एक नेशनल म्युजिनयम खोलने का प्रस्ताव आया था। फिर 1939 ई० में ऊले ने भी दिल्ली में सेण्ट्रल म्युजियम स्थापना का सुझाया दिया था इसके लिए फिरोजशाह कोटला के मैदान को उन्होंने उपयुक्त बताया था। 1944 ई० से 1948 ई० के बीच ह्वीलर ने अपने कार्यकाल में 'सेण्ट्रल नेशनल म्युजियम' का सुझाव रखा था जो 1946 ई० में गठित समिति द्वारा स्वीकार कर लिया गया तथा इसका संचालन 55 सदस्यीय

समिति को सौंपने की सलाह दी गई। इसमें पाँच सेक्शन्स के खोलने की बात की गई — कला, प्राक्-ऐतिहासिक पुरातत्त्व, ऐतिहासिक पुरातत्त्व, मुद्रा और अभिलेख तथा नृशास्त्र। इसके साथ पुस्तकालय, रासायनिक प्रयोगशाला तथा विज्ञान को भी जोड़ने का सलाह दिया गया। अन्त में 1949 ई० में राष्ट्रीय संग्रहालय राष्ट्रपति भवन के दरबार हाल में खोला गया जो अपने नए भवन में 1955 ई० में स्थापित हुआ और दिसम्बर, 1960 ई० में जनता के लिए खोल दिया गया।

1944 ई० में म्युजियम एसोसिएशन का गठन हुआ कि इसमें इस पर विचार-विमर्श किया जा सके। इस संस्था ने 'जनरल ऑफ म्युजियम एसोसिएशन' का प्रकाशन प्रारम्भ किया और समय-समय पर 'न्यूज लेटर्स' का भी प्रकाशन शुरू किया। 1956 ई० में केन्द्रीय सरकार ने एक सेण्ट्रल म्युजियम एडवाइजरी बोर्ड की स्थापना किया कि वह अपने सलाह से संग्रहालय की प्रगति को बढ़ावे। 1946 ई० में यूनेस्को (UNESCO-United Nations Education Seientific Cultural Organisation) ने इण्टरनेशनल काउंसिल ऑफ म्युजियम्स (ICOM) की स्थापना किया कि इसमें कार्यरत लोगों को अन्तरराष्ट्रीय मंच मिल सके। 1949 ई० में 'म्युजियम डिवीजन' की स्थापना हुई तथा 1948 ई० से 'म्युजियम' पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ कि इस विधा के लिए आधुनिकतम ज्ञान का प्रसार किया जा सके। भारत शुरू में ही इसका सदस्य हो गया। समय, वातावरण तथा अन्य कारणों से सामग्रियों के नुकसान को ठीक करने के लिए परिरक्षण की आवश्यकता होती थी इसके कारण संग्रहीत वस्तुओं की बड़ी हानि होती थी। इसको रोकने के लिए यूनेस्को ने रोम में 1959 ई० में एक केन्द्र तथा ब्रूसेल में एक प्रयोगशाला खोली, जहाँ इस संबंध में प्रशिक्षण दिया जाता था। इसने इस विद्या में प्रशिक्षुओं के अध्ययन हेतु छात्रवृत्तियाँ भी स्वीकृत की गई थी।

इसी क्रम में भारत सरकार ने भी एक परिरक्षण (Conservation) प्रयोगशाला की स्थापना राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में किया। रोम के केन्द्र ने इस प्रयोगशाला को दक्षिण एशिया का प्रामाणिक परिरक्षण प्रयोगशाला (Conservation Laboratory) स्वीकार कर लिया। 1976 ई० में भारत सरकार ने 'नेशनल रिसर्च लेबरेटरी फॉर दि कन्जरवेशन ऑफ कल्चरल प्रापर्टीज़' को लखनऊ में स्थानान्तरित कर दिया।

एक कठिनाई थी संग्रहाहलय के कार्यकर्ताओं के उचित ज्ञान और प्रशिक्षण की। इसके लिए आज अनेक विश्वविद्यालयों में संग्रहालयीय व्यवसायिक ज्ञान के द्विवर्षीय पाठ्यक्रम प्रारम्भ हुआ है। यह कार्य सर्वप्रथम एम० एस० विश्वविद्यालय बड़ौदा में 1952 ई० में शुरू हुआ। आज कलकत्ता एवं काशी हिन्दू विश्वविद्यालयों, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, भोपाल के बिरला संग्रहालय, पिलानी (राजस्थान) के टेक्नालॉजी संस्थान आदि में यह पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया गया है। उसमें विभिन्न पक्षों का अध्यापन किया जाता है। डिप्लोमा तथा परास्नातक उपाधि के अध्यापन की व्यवस्था इनमें है। राष्ट्रीय और अन्य भारतीय संग्रहालयों में भी सेवारत कार्यकर्ताओं के लिए अल्पकालिक रिफरेशर पाठ्यक्रम चालू किये गए हैं। भारत के शिक्षा मंत्रालय ने भी इनके लिए 10 दिवसीय ऐसे पाठ्यक्रम 1963 ई० से चालू किया है। इनमें विशिष्ट विभागों के कार्यकर्ताओं को उस दृष्टि से प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है।

आज भारत में विशिष्ट विषयों से सम्बन्धित अनेक संग्रहालय समय-समय पर स्थापित किये

जा रहे हैं तथा विविध स्रोतों से इसके विकास को प्रेरित किया जा रहा है। विज्ञान का प्रथम संग्रहालय बिरला टेक्नोलॉजी इन्स्टीट्यूट, पिलानी (राजस्थान) में स्थापित हुआ। फिर कौंसिल ऑफ साइंटिफिक एण्ड इण्डस्ट्रियल रिसर्च ने पहली बार विज्ञान संग्रहालय की स्थापना 1956 ई० में कलकत्ता में 'बिरला इण्डस्ट्रियल एण्ड टेकनिकल म्युजियम' नाम से स्थापित किया। अब विज्ञान के सभी संग्रहालय मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत 1978 ई० से डाइरेक्टर जेनरल की देखरेख में हैं। बंगलोर, मुम्बई, पटना, नई दिल्ली में भी ऐसे संग्रहालय स्थापित हैं। इसी प्रकार दूसरे विषयों में यथा प्राकृतिक इतिहास सम्बन्धी संग्रह प्रायः सभी संग्रहालयों में रखे गये हैं। जुलाजिकल म्युजियम, अहमदाबाद में म्युनिसिपल कॉरपोरेशन द्वारा स्थापित हुआ। फिर प्राकृतिक इतिहास का राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में स्थापित हुआ। इसको प्राकृतिक परिवेश में कलकत्ता में भी एक पहाड़ी पर खुले में बनाया गया है। नृविज्ञान का संग्रहालय विश्वविद्यालयों के विभागों और दो जनजातीय शोध संस्थानों राँची और कलकत्ता द्वारा अलग चलाये जाते हैं। पर एन्थ्रोपोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया को क्षेत्रीय नृविज्ञान संग्रहालय के स्थापना का काम सौंपा गया है जिसका प्रधान 'नेशनल म्युजियम ऑफ मैन' भोपाल में सांस्कृतिक विभाग द्वारा स्थापित और संचालित है।

कला और पुरातत्त्व संग्रहालय तो सभी जगह बड़ी संख्या में खुले हैं, जिनका सर्वोच्च केन्द्र राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली है। इनका विकास 1960 ई० से हुआ जब डॉ० ग्रेस मोर्ले राष्ट्रीय संग्रहालय के डाइरेक्टर बने। इस पद पर 1966 ई० तक रहने के बाद UNESCO के इण्डियन कौंसिल ऑफ म्युजियम्स के 'रीजनल एजेन्सी फॉर साउथ एशिया' की स्थापना नई दिल्ली में होने पर इन्हें इसका कार्यभार सौंपा गया। इस समय भारतीय तथा दक्षिण एशियाई संग्रहालयों के विकास में इसका विशेष योगदान रहा। इसने इसमें आने वाली सभी कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया जिसके कारण आज ये केन्द्रीय एवं प्रान्तीय सरकारों, विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थाओं, सोसाइटीज और प्राइवेट ट्रस्टियों द्वारा सामान्य रूप से संचालित किये जाते हैं। आज इनकी संख्या भारत में 500 से अधिक है। इसके विकास में विभिन्न देशों के सांस्कृतिक विनिमय प्रोग्रामों (Cultural Exchange Programmes) द्वारा विशेष लाभ हुआ है। इसी क्रम में भारत तथा संयुक्त राज्य सब-कमीशन, शिक्षा और संस्कृति द्वारा इनकी अनेक कठिनाइयों का निवारण हुआ है। भारत महोत्सवों (Festivals of India) तथा दूरदर्शन से भी इसे विशेष लाभ और प्रसार हुआ है।

भारत सरकार ने ह्वीलर द्वारा स्थापित 'सेण्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड ऑफ आर्कियोलॉजी' की तरह 1956 ई० में 'सेण्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड फॉर म्युजियम्स' की स्थापना संग्रहालयों के विकास, सलाह, देख-रेख के लिए स्थापित किया है। यद्यपि 1976 ई० में किन्हीं कारणों से यह तोड़ दिया गया था पर 1987 ई० में पुनः इसका गठन हुआ जिससे संग्रहालयों की समस्याओं के निराकरण के लिये मंच मिला। इससे संग्रहालय विकास गतिमान हुआ। इन्टरनेशनल कौंसिल ऑफ म्युजियम्स ने भी प्रशिक्षण व्यवस्था, प्रदर्श विधि आदि को विकसित करने में सहयोग देकर इसे बढ़ाया। इसके लिए विदेशों में प्रचलित प्राविधियों को भी इसमें जोड़ गया पर इसमें आर्थिक कठिनाई आड़े आती थी। इसके लिए भारत सरकार के सांस्कृतिक विभाग ने एक राशि सहयोग हेतु निकालकर इसकी व्यवस्था के लिए म्युजियम ग्रांट्स कमेटी की स्थापना किया। यह मुख्यतः

पंजियन, प्रस्तुतीकरण, कन्जरवेशन, पुस्तकालयों में पुस्तकों के क्रय, मोनोग्राफ एवं कैटलग प्रकाशन तथा संग्रहालय भवन में परिवर्तन-परिवर्धन हेतु इस राशि से सहायता दे सकती थी। यह राशि राष्ट्रीय संग्रहालय के डायरेक्टर ज़ेनरल को सौंपी गयी है। दूसरी ओर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने भी संस्थागत संग्रहालयों को सरल रीति से सहयोग देना प्रारम्भ किया है जिससे उनका विकास हुआ जैसे — भारतीय कला भवन, वाराणसी, आशुतोष संग्रहालय, कलकत्ता आदि। इसके पूर्व से ही ये जनता के पुस्तकालयों, विकसित शिक्षण संस्थाओं, ऐतिहासिक स्थलों, धार्मिक केन्द्रों, विशेष रूप से दक्षिण भारत में मध्यकालीन मठों तथा मन्दिरों के साथ जुड़े हैं। इसी क्रम में गवर्नमेंट म्युजियम मद्रास (1851 ई०), बंगीय साहित्य परिषद चित्रशाला, कलकत्ता (1893 ई०), नालन्दा संग्रहालय, बिहार (1917 ई०), ऋषि वंकिम पुस्तकालय एवं संग्रहालय कंथालपार, नईहट्टी, 24 परगना, पश्चिम बंगाल (1954 ई०) आदि उसी एशियाटिक सोसाइटी के पुस्तकालय की शाखा के साथ विकसित हुए। पश्चिमी भारत में भी पुस्तकालयों में ही संग्रह रखे जाते थे जो बाद में संग्रहालय का रूप लेते थे। इन्हें 'सरस्वती भण्डार' नाम से जानते थे जैसे सरस्वती भण्डार, कोटा (राजस्थान) तथा सरस्वती महल, तंजौर (तमिलनाडु)। अब पुरातात्त्विक संग्रहालयों की भी स्थापना प्रारम्भ हुई। इसमें प्रमुख हैं—खजुराहो का पुरातात्त्विक संग्रहालय (1910 ई०) तथा विदिशा संग्रहालय, भिलसा म० प्र० (1940 ई०), वैशाली संग्रहालय, बिहार (1945 ई०), नागार्जुन-कोण्डा का पुरातात्त्विक संग्रहालय, गुण्टूर, आंध्र प्रदेश (1949 ई०)। इसी क्रम में तीर्थयात्रा के स्थलों में संग्रहालय स्थापित किये गये हैं, यथा—दिगम्बर जैन संग्रहालय (1948 ई०) सोनगिरि (मध्य प्रदेश), जो जैन धर्म से सम्बन्धित है, सारनाथ संग्रहालय (1904 ई०), वाराणसी (उत्तर प्रदेश) यह बौद्ध धर्म से सम्बन्धित हैं, साँची का पुरातात्त्विक संग्रहालय (1918 ई०) मध्य प्रदेश सभी बौद्ध धर्म और संस्कृति से सम्बन्धित, अमरावती का पुरातात्त्विक संग्रहालय, बोधगया संग्रहालय (1956 ई०) भी इसी प्रकार भी स्थापित किये गये हैं। मठों-मन्दिरों से जुड़े संग्रहालय है। जैसे — श्रीरंगनाथ स्वामी देवस्थानम संग्रहालय, (1935 ई०), श्रीरंगम् (तमिलनाडु), मीनाक्षी सुन्दरेश्वर मन्दिर संग्रहालय (1966 ई०) मदुराई। अब इसी परम्परा में मन्दिरों के नाम के पीछे संग्रहालयों का नाम भी रखा जाने लगा है, जैसे — वेंकटेश्वर मन्दिर के नाम पर वेंकटेश्वर संग्रहालय (1950 ई०), आंध्र प्रदेश। पहले यह संग्रहालय नामलबार मन्दिर में ही स्थापित था।

भारतीय संग्रहालय की भावी योजनाएँ

परिस्थितियाँ अत्यन्त तीव्रगति से परिवर्तित होती जा रही हैं। इस परिवेश में संग्रहालय की क्रियाओं को भी बदलना अनिवार्य हो गया। पाश्चात्य देशों के संग्रहालयों की व्यवस्था व्यक्तिगत सहयोग से होती है जबकि भारत में राजकीय सहयोग ही इसमें प्रधान होता है। इसलिए यहाँ व्यक्तिगत जागृति लानी आवश्यक है कि संग्रहालयों के विकास में लोगों की रुचियाँ बने। सरकारी सहयोग में कुछ शर्तें होती हैं 'ifs' और 'buts' तथा कुछ नकारात्मक पक्ष 'nots' भी होता है। इससे कोई भी निर्णय अत्यन्त शीघ्र नहीं लिया जा सकता। महाराजा लोग इसमें अधिक सक्रिय भूमिका अदा करते थे। कई महल संग्रहालयों में बदल गए थे। ग्वालियर का सिंधिया महल इसका जीवन्त उदाहरण है। पर जब से भारतीय सरकार ने इनका प्रीवीपर्स (Privy purse)

बन्द किया तब से इनकी आमदनी में भारी गिरावट आई और इन्होंने संग्रहालयों को खोलना या उनमें योगदान देना बन्द कर दिया। साथ ही, कला के विकास में इन रजवाड़ों को बड़ी भागेदारी थी। इनकी कलात्मक वृत्तियाँ बड़ी कुशाग्र थी। पर प्रीवीयर्स के बन्द होने के कारण जो कला में गिरावट आई है उसकी पूर्ति ये संग्रहालय अपनी कला सामग्रियों को दान देकर कर सकते हैं।

आज की औद्योगिक क्रान्ति ने कृषक जीवन के शान्त वातावरण को प्रदूषित कर दिया है। लोगों में उच्छृंखलता बढ़ी है। नगर की सजावट समाप्त हो गई है। नागरिक सुविधाएँ बन्द हो गई है। इससे जीवन कुण्टाग्रस्त तथा उत्तेजनापूर्ण हो गया है। इस कठिनाई को कम करने का कार्य हमारे संग्रहालय ही कर सकते हैं।

भारत देश विभिन्नताओं से भरा है : भाषा, भूषा, आचार, विचार, जातियाँ, भोजन, व्यवहार आदि में। भाषाई जातीय, क्षेत्रीया आधारों पर प्रतिवर्ष देश विखण्डित होता जा रहा है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम अपने भाइयों से टूटते जा रहे हैं। हमारी एकता खतरे में पड़ती जा रही है। पारस्परिक सहयोग भी समाप्त होता जा रहा है। इन्हें दिखाकर पारस्परिक एकता का भाव पैदा करता है। इस समस्या का निराकरण संग्रहालय अपने प्रदर्शों द्वारा करता है।

दूसरी ओर वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी प्रगति से हमारा ग्रामीण समाज पूर्णतया वंचित है। उसे इनके गुण दोषों का ठीक से ज्ञान ही नहीं है। यह कार्य संग्रहालय ही प्रदर्शन द्वारा कर सकते हैं। हमारी भावी योजना होनी चाहिए कि प्रौद्योगिक संग्रहालयों की संख्या अधिक बढ़ाई जाय।

हम संग्रह के लिए अत्यन्त पुरातन सामग्रियों का ही चयन करते हैं। ऐसा ही विजयनगर राज्य में 15वीं शती ई० तक का ही शिल्प हमारे संग्रहालयों की वीथियों को सुशोभित करता है। इसी प्रकार चित्रकला में 18वीं शती की झगड़ा चित्रकला तक हमारा ज्ञान आकर रुक जाता है। हमारे संग्रहालय इससे आगे का चित्र संगृहीत ही नहीं करते। इसके परिणामस्वरूप हम आधुनिक कला प्रवृत्तियों के ज्ञान से अनभिज्ञ रहते हैं। अब संग्रहालयों का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि वे आधुनिक काल की कला सामग्रियों का भी संग्रह करते चलें कि भविष्य में इनकी खोज की कठिनाई भावी पीढ़ी को न उठानी पड़े।

विदेशी कला की ओर भारतीय संग्रहाकों का ध्यान संभवतः पहले नहीं गया था जिसके अभाव में वे एक ओर जहाँ विश्व कलाकृतियों से अपरिचित रहते वहीं दूसरी ओर इनमें कौशल का विकास नहीं आँक सकते थे। साथ ही, इनके परिवेश में भारतीय कलाकृतियों का मूल्यांकन भी सम्भव नहीं हो पाता था। उसके अभाव में हमारी कलात्मतक दृष्टि तुलनात्मक नहीं बन सकी थी। केवल आज भारत में कुछ ही ऐसे कला संग्रहालय हैं जहाँ विदेशी कलाकृतियाँ देखी जा सकता है जैसे—हैदराबाद का सालारजंग संग्रहालय, बम्बई का प्रिंस ऑफ वेल्स संग्रहालय, कलकत्ता का इण्डियन म्युजियम, बड़ौदा संग्रहालय आदि। इसलिए ऐसी योजना बनानी चाहिए कि विदेशी कलाकृतियाँ या उनकी प्रतिमूर्तियाँ अन्य संग्रहालयों को भी प्राप्त हो जाय कि दर्शक वहाँ पहुँचकर तुलनात्मक ज्ञान प्राप्त कर सके तभी सही आकलन संभव है।

बहुत-सी ऐसी सामग्रियाँ हैं जो आज चलन से बाहर होती जा रही हैं। उनका अस्तित्व ही समाप्त होता जा रहा है। स्वर्ण नियन्त्रण ने स्वर्ण कलाकारों के कौशल को प्रतिवाधित कर दिया है। नई खोजों ने पुराने आयुध तीर, धनुष आदि को पीछे ढकेल दिया है। बेंजों, जलतरंग, आर्केस्ट्रा ने ढोलक, पखावज, झाल, मजीरा आदि साज को बहिष्कृत बना दिया है। पाप संगीत में धुपद, धमार, लोरकी, फरी आदि पुरातन ग्रामीण गीतों और लोक नृत्य की परम्परा को भुला दिया है। ये जीवित रखी जा सकती है संग्रहालयों की वीथियों में इन्हें देखकर। अतः हमें अपने संग्रहालय में ही पुरातन गीतों के संग्रह तथा वाद्ययंत्रों, आयुधों, कला की चुटकियों आदि को पुनः जीवित करना होगा जो कभी भारत की अपनी प्रतिष्ठा थी, पहचान थी।

अभी भी स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद हमारी युवा पीढ़ी अपने पड़ोस की प्राकृतिक सम्पदा से अनभिज्ञ है। यह हमारे संग्रहालयों का धर्म है कि नई पीढ़ी को प्राकृतिक स्थिति, सम्पदा आदि का ज्ञान दे। इसके लिए प्राकृतिक इतिहास के तत्त्वों को अधिकाधिक जोड़ना चाहिए तथा लोगों में संग्रहालय की भावना को जागृत करना चाहिए। इसके साथ ग्रामों और नगरों में विविध विधाओं के संग्रहालयों को स्थापित करना चाहिए कि भारत का पुरातन जीवित रखा जा सके।

इस दृष्टि से भविष्य के लिए निम्न प्रकार के संग्रहालयों की स्थापना अपेक्षा समाज से की जा सकती है :–

ग्रामीण क्षेत्रों के लिए

(i) कृषि संग्रहालय — इसमें आधुनिक कृषि यंत्रों को रखा जाय। खाद, बीज, कृषि की आधुनिक विधि का प्रदर्शन तथा उत्पादन में बढ़ोत्तरी आदि चार्ट के द्वारा दिखानी चाहिए कि लोगों में उत्साह बढ़े। भूमि सुधार की विधा और भू-प्रकरों का प्रदर्शन, रोग, उनका निदान, प्रयोगशालाओं की सूची, कार्य पद्धति आदि का चार्ट होना चाहिए। यहाँ एकत्रित होने से एकता, सद्भाव बढ़ता है जैसे पहले मन्दिरों में विद्यालय, संग्रहालय आदि में एकत्रित होते थे। इसका पंचायत घरों में आयोजन करना लाभकर होगा तथा कृषकों के उत्पादन में कम्पीटीशन भी कराया जाय।

(ii) विद्यालयों में कला और पुरातत्त्व संग्रहालय — हमारे देश की बहुत-सी पुरातात्त्विक सामग्रियाँ बिखरी पड़ी हैं। उनके विषय में बालकों को प्रशिक्षित कर उनका संग्रह कराया जाय तथा प्रत्येक विद्यालय में संग्रहालय खोलकर एकत्रित सामग्रियाँ उन बालकों के नाम के साथ जोड़कर दिखाई जाय जिन्होंने उन्हें संगृहीत किया है कि उन्हें आगे काम करने की प्रेरणा मिले। इससे मृदमाण्डों के टुकड़े, सिक्के, मूर्तियाँ आदि बहुत बड़ी संख्या में एकत्र हो जायंगी तथा हमारा इतिहास सम्पन्न हो सकेगा। अनेक प्रकार की ललित कलाएँ, हस्तशिल्प आदि जैसे कथरी बनाना, डलिया बनाना, लकड़ी पर कशीदाकारी, बर्तन की कला आदि समाप्त होती जा रही है उनको एकत्रित कर उनके कौशल को विकसित करने में योगदान दिया जा सकता है। इसमें संगीत का भी आयोजन कर अच्छे कलाकारों को उपहार देकर डूबती विधाओं को जगाया जा सकता है।

(iii) वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी संग्रहालय — B. I. T. M. कलकत्ता ने इस प्रकार का एक सचल संग्रहालय प्रारम्भ किया है। ऐसे ही करके लोगों को बिजली, जल संसाधन, नए वैज्ञानिक विकास,

खनिज, परिवहन आदि के विषय में ज्ञान दिया जा सकता है। इसे विद्यालयों, गाँवों में ले जाकर लोगों को बताना में बताना होगा तथा नई खोजों की ओर उनको प्रेरित करना होगा। अपने गाँव के पंचायत में ऐसी चीजों के संग्रह को शीशे की आलमारियों में एकत्रित करके रखने की प्रेरणा देनी चाहिए। इसी प्रकार पत्थर, पादप, पक्षियों आदि का भी संग्रह करना चाहिए।

(iv) **व्यक्तिगत संग्रहालय** — किसी एक नेता से संबंधित चार्ट, फोटो, जीवन वृत्त, पुस्तकें आदि बालकों से प्रतिवर्ष एकत्रित उसके विषयक संग्रहालय के लिये सामग्री एकत्रित हो जाएगी। जैसे इस वर्ष राहुल सांस्कृत्यायन शताब्दी समारोह के अवसर पर राहुलजी पर ऐसा ही कभी पुराने राजा महाराजाओं के विषय में भीं ऐसा ही करना चाहिए जैसे अकबर, चन्द्रगुप्त आदि। इनकी एक-एक प्रकार की सामग्रियों के फोटो का संकलन एक छात्र या एक दल को देना चाहिए जैसे पुस्तकें, वस्त्र, धार्मिक प्रक्रिया आदि जिससे बिना किसी विशेष व्यय के कम समय में एक व्यक्ति की पूरी जीवन वृत्ति तैयार हो जायगी।

शहरी क्षेत्रों के लिए

शहरी क्षेत्रों में संग्रहालयों के विकास की सम्भावनाएँ उपेक्षाकृत अधिक होती हैं। इसका कारण है कि **प्रथमतः** उद्योगपतियों का सहयोग आर्थिक रूप से यहाँ प्राप्त हो सकता है। बिड़ला ने कलकत्ता में संग्रहालय खोला है और दूसरे नगरों में भी खोल रहा है। प्रायः प्रत्येक धनी लोगों के पास कला सामग्रियों का संचय रहता है क्योंकि 'स्वर्ण नियन्त्रण अधिनियम' (Gold Control Act) के बाद स्वर्ण रखने की यह सबसे अच्छी रीति है। आज टाटा, सिंहानिया, कनोरिया गोयनका आदि सभी पूँजीपतियों के पास कला का अच्छा संग्रह है। इनको प्रेरित कर संग्रहालय के लिए इन सामग्रियों को लिया जा सकता है। ऐसा न करने के कारण ही वहाँ कानपुर जैसे बड़े शहर में जहाँ सिंहानिया के पास बड़ी मात्रा में कला सामग्रियाँ संचित हैं, आज भी कोई संग्रहालय नहीं है। **दूसरे** इसके लिए सरकार को उन पूँजीपतियों को Gift Tax से छूट देना चाहिए जो अपनी सामग्री संग्रहालय को देते हैं। उनका नाम भी संग्रहालय के दान दताओं में जोड़ना चाहिए। इससे बहुत से लोग अपने संग्रह, संग्रहालय को समर्पित करने लगेंगे। **तीसरे** Museum Friends Societies स्थापित करना होगा। इसके द्वारा समिति के सदस्य संग्रहालय कर्मियों का बोझ अपने पर उठा लेते हैं। संग्रहाल्रय संचालन में इनका योगदान होने से कर्मचारियों पर होने वाले व्यय भी वच जाएगा। ये सहयोगी लोगों को संग्रहालय में दान देने के लिए प्रोत्साहित करने लेगेंगे। औरतों के पास इस कार्य के लिए समय और क्षमता दोनों ही उपलब्ध है। इसलिए इस कार्य में उन्हें आगे आना चाहिए। ऐसा कार्य अमेरकिा के शहरों में हुआ है तथा बम्बई में भी प्रारम्भ हो रहा है। **चौथे** शहरी संग्रहालयों में सामग्रियों का विनिमय तथा कर्मचारियों की बदली आसानी से सम्भव होगी। इससे संग्रहालय सामग्रियों में बढ़ोत्तरी बड़ी आसानी से हो सकेगी। **पाँचवें** अध्ययन के सम्बन्ध में Curator अपना ज्ञान दूसरों से सम्पर्क बढ़ाकर प्राप्त कर सकता है तथा नई आलोचनाएँ एवं व्याख्या जान सकता है। **छठे** इसके द्वारा धर्म निरपेक्षता और राष्ट्रीय समन्वय को भी बढ़ावा मिल सकेगा क्योंकि प्रायः भारतीय कलाकृतियाँ धर्मपरक होती हैं और सब जगह एक ही प्रकार की भावना से प्रेरित होने के कारण समन्वय के विकास में बल मिलना स्वाभाविक है।

इन उद्देश्यों से शहरों में निम्न प्रकार के संग्रहालय खोले जा सकते हैं :–

(1) कला और पुरातत्त्व संग्रहालय

(2) विज्ञान और प्रौद्योगिकी संग्रहालय

(3) नृशास्त्रीय संग्रहालय (वस्त्र, व्यवहार, जीवन विधि आदि पर)

(4) व्यक्तिपरक संग्रहालय (राजेन्द्र प्रसाद, नेहरू, गाँधीजी आदि पर)

(5) प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय (चिड़िया घर, मछलीघर, मुर्दाघर, पादप तथा प्रस्तर प्रकारों के संग्रह पर आधारित संग्रहालय)

(6) पुस्तक संग्रहालय (बुरी छपाई से लेकर अच्छी छपाई तक की पुस्तकें, छापने की विधि का विकास आदि इसमें होंगी।)

(7) फिलेटिलिक संग्रहालय (डाक टिकटों का संग्रह भारत में ऐसा केवल एकमात्र दिल्ली में है। यह पूर्णतया नई विधा है।)

(8) सुरक्षा संग्रहालय (अतीत से अबतक के शस्त्रास्त्रों का संग्रह)

(9) स्वास्थ्य संग्रहालय (स्वच्छता, स्वास्थ्य समस्याएँ एवं निराकरण, परिवार नियोजन की विधियों का प्रदर्शन आदि इसमें किया जाय।)

(10) बाल संग्रहालय (बालोपयोगी विज्ञान, कला की सामग्रियों का प्रदर्शन इसमें अपेक्षित है।)।

□